CONSTITUTIONAL LAW –II (UNIT-III)

संघ की न्यायपालिका

उच्चतम न्यायालय (अनु0 124–147)

संघ और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन संद्यात्मक संविधान का मूल तत्व है। शक्ति विभाजन को बनाये रखने के लिए, जिसमे कि विभिन्न सरकारें एक–दूसरे के कार्य क्षेत्र में हस्ताक्षेप न करे, संविधान के उपबन्धों की सही व्याख्या आवश्यक है। इसके लिए एक ऐसी संस्था की आवश्यकता होती है जो स्वतंत्र एंव निष्पक्ष हो और केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के बीच विवादों को निष्पक्ष से निपटा सके। संद्यीय व्यवस्था तथा भारतीय संविधान के अन्तर्गत यह कार्य न्यायपालिका /उच्चतम न्या0 को सौपा गया है। संविधान के उपबन्धों की व्यवस्था के सम्बंध में अन्तिम निर्णय देने का प्राधिकार उच्चतम न्या0 को ही प्राप्त है। इसके द्वारा की गयी संविधान की व्याख्या से सभी आबद्ध होते है, इसलिए उच्चतम न्या0 को संविधान का संरक्षक कहा जाता है। यह सिविल और फौजदारी के मुकदमें का सर्वोच्च अपीलीय न्या0 है।

उच्चतम न्यायालय का गठन –

अनु0 124 भारत के लिए एक उच्चतम न्यायालय की स्थापना का उपबन्ध करता है। अनु0 124 (2) के अनुसार उच्चतम न्या0 के न्यायाधीशों को राष्ट्रपति नियुक्ति करता है। किन्तु इस मामले मे राष्ट्रपति को कोई वैवेकिक शक्ति नही प्राप्त है। अनु0 124 (2) के अनुसार, मुख्य न्यायाधीश , राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम तथा उच्चतम न्या0 के, ऐसे न्यायाधीशों के परामर्श के अनुसार जिसे राष्ट्रपति उपयुक्त समझे, नियुक्त किया जायेगा। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति मुख्य न्यायाधीश के परामर्श से करेगा। न्यायाधीशों की नियुक्ति करने की राष्ट्रपति की शक्ति एक औपचारिक शक्ति है, क्योकि वह मन्त्रीमण्डल की सलाह से कार्य करता है। कार्यपालिका को न्यायाधीशो की नियुक्ति के मामले में उच्चतम तथा उच्च न्या0 के न्यायाधीशों से परामर्श करना आवश्यक है, जो इस विषय पर परामर्श देने के लिए पूर्ण रूप से योग्य है।

अनु0 124 के अनुसार राष्ट्रपति को संविधान द्वारा विहित अर्हता रखने वाले किसी भी व्यक्ति को मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है। अनु0 124 में इस बात का भी कोई उल्लेख नही किया गया है कि उच्चतम न्या0 के वरिष्ठ न्यायाधीश को ही मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्ति किया जा सकता है। संविधान में ऐसी बाध्यता न होने के बावजूद भी मुख्य न्यायमूति के पद पर वरिष्ठम न्यायाधीश की नियुक्ति करने की परम्परा चली आ रही है।

केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य ए0आई0आर0, 1973 एस0सी0, 1461 के निर्णय के बाद वरिष्ठता क्रम की उपेक्षा करके श्री अजीत नाथ रे को भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्ति किया गया। इसकी प्रमुख कारण कैशवानन्द भारती के वाद में तीन न्यायाधीशों (शेलट, हेगड़े तथा ग्रोवर) द्वारा सरकार के विरूद्ध दिया गया निर्णय था। ये तीनो न्यायाधीश श्री 'रे' से वरिष्ठ थे।

उपर्युक्त निर्णय की तीव्र आलोचना हुई, परन्तु सरकार ने निम्नलिखित तर्क देकर अपने इस कदम को उचित ठहराने का प्रयास किया–

01. **संवैधानिक उपबन्ध** – राष्ट्रपति किसी भी न्यायाधीश को मुख्य न्यायाधिपति नियुक्ति कर सकता है, चाहे वरिष्ठ हो या कनिष्ठ।
02. **विधि** आयोग ने सन् 1956 में यह सुझाव दिया था कि मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति वरिष्ठता के आधार पर नही बल्कि योग्यता क आधार पर की जानी चाहिए।
03. स्रकार की ओर से कहा गया कि अमेरिका और इंग्लैण्ड में भी वरिष्ठता के आधार पर नियुक्ति नही की जाती है।
04. न्यायाधीश की नियुक्ति करते समय उनके सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक दृष्टिकोण पर विचार करना चाहिए।
05. न्यायाधीशो के कार्यकाल में अधिकता होगी जिस से मुख्य न्यायाधीश को न्यायालय को एक उचित दिशा देने में अवसर प्राप्त होगा।

न्यायिक निर्णय –

कार्यपालिका की प्रमुखता –

एम0पी0गुप्त बनाम भारत संघ ए0आई0आर0 1982 एस0सी0 149 के मामले मे पटना उच्च न्या0 के मुख्य न्यायाधीश के मद्रास उच्च न्या0 में स्थानान्तरण आदेश तथा दिल्ली उच्च न्यायालय के अपर न्यायाधीश की पदावधि न बढ़ाये जाने के आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि वह भारत के मुख्य न्यायाधीश की राय के बिना की गई थी।

उच्चतम न्या0 ने कहा कि अनु0 124 में प्रयुक्त परामर्श शब्द से तात्पर्य ''पूर्ण एंव प्रभावी परामर्श'' है। बहुमत का निर्णय यह था कि 'परामर्श' मानने के लिए राष्ट्रपति बाध्य नही है। इस वाद में कार्यपालिका को प्रमुखता दी गयी।

न्यायाधीशों की नियुक्ति में न्यायालय की प्रमुखता –

उच्चतम न्या0 अभिलेख अधिवक्ता संघ बनाम भारत संघ 1993 के मामले में एस0पी0गुप्त बनाम भारत संघ 1982 के निर्णय को उलटते हुये बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में उच्चतम न्या0 के मुख्य न्यायाधीश के मत को सर्वोच्च

महत्व देना चाहिए जो वह अपने सहयोगी से परामर्श करके व्यक्त करता है और कार्य–पलिको को केवल अयोग्य नियुक्तियों को रोकने की अनुमति होगी, जो वे मुख्य न्यायाधीश को कारण बताकर ही कर सकती है। बहुमत ने यह निर्णय दिया कि उच्चतम न्या0 के मुख्य न्यायाधीश के पद पर वरिष्ठम न्यायाधीश की ही नियुक्ति की जायेगी।

अनु0 124 मे परामर्श शब्द का प्रयोग देखते हुये किसी को वैवेकीय शक्ति नही दी जा सकती है चाहे वह भारत का प्रधानमंत्री हो या मुख्य न्यायाधिपाति। न्यायाधीशो की नियुक्ति मे सरकार को नही बल्कि भारत के मुख्य न्यायाधीश के निर्णय को प्राथमिकता दी जायेगी। वह एक व्यक्ति के रूप में नही बल्कि न्यायपालिका के अध्यक्ष के रूप में निर्णय लेता है। न्यायाधीशों की नियुक्ति एंव स्थानान्तरण को परामर्श का अभाव तथा अर्हता का अभाव पर ही न्या0 मे चुनौती दी जा सकती है। इसके अतिरिक्त किसी भी आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार नही होगा।

वर्तमान स्थिति – इन री प्रेसीडेन्सियल रिफरेन्स का मामला :

न्यायालय की प्रमुखता –

उच्चतम न्या0 की नौ सदस्यीय संविधान पीठ ने इन री प्रेसीडेन्सियल रिफरेन्स ए0आई0आर0 1999 एस0सी0 1 (उच्चतम न्या0 के न्यायाधीशों की नियुक्ति तथा स्थान्न्तरण मामले के नाम से प्रसिद्ध है) मामले मे सर्वसम्मति से यह निर्णय दिया गया कि 1993 के "SC Advocates case" में बतायी गयी परामर्श प्रक्रिया का पालन किये बिना मुख्य न्यायाधीश द्वारा की गई सिफारिशों को मानने के लिये राष्ट्रपति बाध्य नही हैं।

पिछले मुख्य न्यायाधीश श्री एम0एम0 पुंछी ने भाजपा सरकार को न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए अपनी सिफारिश को भेजा। ऐसा पता चला था कि उन्होने मनमाने ढ़ग और अन्य न्यायाधीशों से परामर्श किए बिना राष्ट्रपति को अपनी सिफारिश भेजी थी। सरकार ने उसे रोक लिया और इस पर उच्चतम न्या0 की सलाह मॉगी।

9 सदस्यीय संविधान पीठ का निर्णय सुनाते हुये न्यायमूर्ति श्री0 एस0पी0 भख्या ने परामर्श प्रक्रिया को अधिक विस्तृत कर दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि उच्चतम न्या0 के न्यायाधीशों के मामले मे मुख्य न्यायाधीश को उच्चतम न्या0 के चार वरिष्ठम न्यायमूर्तियों के समूह से परामर्श करके ही राष्ट्रपति की अपनी सिफारिश भेजनी चाहिए। 1993 के निर्णय में केवल दो वरिष्ठतम न्यायाधीशो से परामर्श करने की बाध्यता थी। भारत के भावी मुख्य न्यायाधीश को भी न्यायाधीशों के समूह मे सम्मिलित होना चाहिए।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उच्चतम न्या0 का उक्त निर्णय समीचीन है। यद्यपि वर्तमान निर्णय में भी न्याय पालिका की सर्वोच्चता बनी रहेगी परन्तु वह और अधिक लोकतांत्रिक, पारदर्शी तथा निष्पक्ष बनेगी। मुख्य न्यायधीश अपनी मनमानी नही कर सकेगा क्योकि उसे उच्चतम न्या0 के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशो के समूह से परामर्श करके ही नियुक्ति सम्बंधी

सिफारिश भेजनी होगी। यह प्रक्रिया अधिक लोकतांत्रिक है, और इसके दुरूपयोग किये जाने की सम्भावना कम है।

उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता

उच्चतम न्यायालय को निम्नलिखित अधिकारिता प्राप्त है–

01. अभिलेख – न्यायालय ''अनु0 129''
02. प्रारम्भिक अधिकारिता ''अनु0 131''
03. अपीलीय अधिकारिता
04. विशेष अनुमति से अपील
05. परामर्शदात्री अधिकारिता।

01. अभिलेख – न्यायालय ''अनु0 129''

अभिलेख न्या0 का तात्पर्य दो बातों से होता है– प्रथम ऐसे न्या0 के निर्णय और कार्यवाहियॉ लिखित होती है। उन्हे सर्वदा सॅजोये रखा जाता है ताकि भविष्य में अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष पूर्वनिर्णय के रूप में प्रस्तुत की जा सके।

द्वितीय ऐसे न्या0 को अपने अवमान के लिए किसी व्यक्ति को दण्ड देने की भी शक्ति होती है।

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अनुसार न्यायालय अवमान दो प्रकार के होते है– सिविल और आपराधिक ''सिविल अवमान'' का अर्थ है न्या0 के किसी डिक्री, निर्णय, आदेश, विदेश, रिट या किसी अन्य प्रक्रिया की जानबूझकर अवज्ञा करना या न्या0 को दिये हुए किसी वचन को जान बूझकर तोड़ना।

''आपराधिक अवमान'' का अर्थ ऐसे विषय के प्रकाशन से चाहे लिखित हो या मौखित हो) या ऐसी कार्यो के करने से है जो 01 न्या0 की निन्दा करते हो या ऐसी प्रवृत्ति वाले हो या उसके प्रधिकार को कम करने की प्रवृत्ति के हो, या 02 न्यायालय पर विपरीत प्रभाव या न्यायिक कार्यवाहियो में बाधा डालते हो या ऐसी प्रवृत्ति वाले हो।

किन्तु निम्नलिखित कार्य या प्रकाशन न्या0 का अवमान करने वाले नही माने जायेगे।

क. निर्दोष प्रकाशन या उनका वितरण।

ख. न्यायिक कार्यो का सही एंव उचित प्रकाशन।

ग. न्यायिक कार्यो की उचित आलोचना।

घ. अधीनस्थ न्या0 के न्यायाधीशों के विरूद्ध की गई ईमानदारीपूर्ण शिकायत।

ड़. न्या0 की गुप्त बैठको की कार्यवाहियों की रिपोर्ट का सही प्रकाशन।

न्या0 अवमान के लिए 06 महीने की सजा या 2000 रूपये जुर्माना या दोनो दिया जा सकता है।

02. उच्चतम न्यायालय की प्रारम्भिक अधिकारिता **(अनु–131)**

अनु0 131 के अन्तर्गत उच्चतम न्या0 को निम्नलिखित पक्षकारों के बीच किसी विवाद में प्रारम्भिक अधिकारिता है–

01. भारत–सरकार और एक या अधिक राज्यों के बीच कोई विवाद, या

02. भारत–सरकार तथा कोई राज्य या कोई राज्य एक ओर, और एक या अधिक राज्य दूसरी ओर के बीच कोई विवाद, या

03. दो या अधिक राज्यों के बीच कोई विवाद।

उपर्युक्त प्रकार के सभी वाद प्रारम्भिक रूप से उच्चतम न्या0 के सामने प्रस्तुत किये जायेंगे। प्रारम्भिक अधिकारिता के अन्तर्गत उच्चतम न्या0 सरकार के विरूद्ध नागरिको द्वारा प्रस्तुत मुकदमें स्वीकार नही कर सकता है। प्रारम्भिक अधिकारिता के अन्तर्गत उच्चतम न्या0 उन्ही विवादों को स्वीकार करेगा जिनमें कोई तथ्य या विधि का प्रश्न अन्तग्रस्त हो जिस पर किसी विधिक अधिकार का अस्तित्व निर्भर करता हो।

कर्नाटक राज्य बनाम भारत संघ 1978 के मामले में केन्द्रीय सरकार ने जॉच आयोग की धारा 03 के अधीन कर्नाटक राज्य के मुख्यमंत्री व कुछ मंत्रीयों के विरूद्ध भष्ट्राचार, भाई – भतीजावाद, पक्षपात और सरकारी शक्तियों के दुरूप्रयोग के आरोपो की जॉच के लिए आयोग नियुक्त किया। पिटीशनर कर्नाटक राज्य ने संविधान के अनु0 131 के अधीन उच्चतम न्या0 में भारत संघ के विरूद्ध वाद संस्थित किया, जिसमें उसने यह अभिकथन किया कि केन्द्रीय सरकार को जॉच आयोग का कोई अधिकार नही है। भारतीय संघ की ओर से यह प्रारम्भिक आपत्ति उठायी गयी कि वाद 131 के अधीन चलने योग्य नही है। क्योंकि जॉच ''मुख्यमंत्री तथा अन्य मंत्रीयो'' के विरूद्ध है, राज्य के विरूद्ध नही जबकि अनु0 131 के अधीन केवल राज्य के विरूद्ध ही वाद चलाया जा सकता है।

उच्चतम न्या0 ने यह अभिनिर्धारित किया कि केन्द्रीय सरकार को लोक महत्व के फैसले में जॉच कराने के लिए जॉच बैठाने की शक्ति प्राप्त है। जॉच आयोग के बैठाने की अधिसूचना विधिमान्य है। न्या0 ने भारत संघ द्वारा उठायी गयी आपत्ति को अस्वीकार करते हुये यह निर्णय दिया कि वाद चलने योग्य है। केवल इस आधार पर कि सरकार और राज्य में अन्तर है, यह नही माना जा सकता है कि अनु0 131 के अधीन वाद चलने योग्य नही है। राज्य सरकार का दावा राज्य का दावा होता है। राज्य की शक्तियों का प्रयोग मंत्रीगण ही करते है। राज्य व्यक्तियों के माध्यम से ही कार्य करता है। मंत्रियों के कार्य राज्य के कार्य होते है।

भारत संघ बनाम राजस्थान संघ 1984 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य द्वारा केन्द्र के विरूद्ध संस्थित वाद उच्चतम न्या0 की अधिकारिता से बाहर है।

अपवाद – निम्नलिखित विवाद न्या0 की प्रा0 अधिकारिता के बाहर है–

01. किसी सन्धि, करार, प्रसंविदा, वचनबद्ध , सनद या अन्यतत्समलिखित से उत्तपन्न हुआ है जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले की गई या निष्पादित थी तथा उनके पश्चात् प्रर्वतन में है और यह उपबन्ध करती है कि उक्त क्षेत्राधिकार उस पर लागू नही होगा। (**अनु0 131 का परन्तुक)**
02. **अनु0 262** के अन्तर्गत संसद विधि द्वारा किसी अन्तर्राज्यिक नदी या नदी घाटो के, या उसके पानी का प्रयोग, नियंत्रण आदि से सम्बंधित किसी विवाद को उच्चतम न्या0 के क्षेत्राधिकार से बाहर कर सकती है।
03. अनु0 280 के अन्तर्गत वित्त आयोग को सौपे हुये विषय से सम्बंधित विवाद।
04. अनु0 290 के अन्तर्गत संघ और राज्य के बीच कतिपय खर्चो के समायोजन से सम्बंधित विवाद।

मूल अधिकारों के सम्बंध में प्रा0 अधिकारित (अनु0 32)

अनु0 32 मूल अधिकारों के उल्लंघन के विरूद्ध नागरिकों को उपचार प्रदान करने के लिए उच्चतम न्या0 को प्रा0 अधिकारिता प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक को अपने मूल अधिकारों के प्रर्वतन के लिए उचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम् न्या0 को प्रचालित करने का अधिकार प्रदान किया गया है। इसके लिए उच्चतम न्या0 को ऐसे निदेश , आदेश या रिट , जिसके अन्तर्गत बन्दी प्रत्यक्षीकरण , परमादेश , प्रतिशोध , उत्प्रेषण और अधिकार प्रेच्छा आती है, जो भी समुचित हो ,जारी करने की शक्ति प्राप्त है।

3. अपीलीय अधिकारिता (अनु0 132)

उच्चतम न्या0 देश का सर्वोच्य अपीलीय न्या0 है। उसे सभी राज्यों के उच्च न्यायालयो के निर्णय के विरूद्ध अपील सुनने का अधिकार प्राप्त है। उसकी अपीलीय अधिकारिता चार शीर्षकों मे विभाजित की जा सकती है –

1. संवैधानिक मामले,
2. सिविल मामले,
3. दाण्डिक मामले,
4. विशेष अनुमति से अपील

01. संवैधानिक मामले ,(132)

भारतीय संविधान का अनु0 132(1) यह उपबंधित करता है, कि भारत में राज्य के किसी उच्च न्या0 के निर्णय ,डिक्री या अन्तिम आदेश, चाहे वे दीवानी , फौजदारी या अन्य कोई कार्यवाहियों में दिये गये हो , की अपील उच्चतम न्याया0 मे की जा सकती है, यदि उस राज्य का उच्च न्या0 अनु0 134 क के अधीन यह प्रमाणिक कर दे कि उस मामले में संविधान से सम्बंधित कोई सारवान् विधि का प्रश्न अन्तग्रस्त है।

दीवानी मामलों मे अपील – अनु0–133

अनु0 133 यह उपबंधित करता है कि उच्च न्या0 की सिविल कार्यवाही में दिये गये निर्णय, डिक्री या अन्तिम आदेश के विरूद्ध उच्चतम न्या0 में तभी अपील की जा सकती है जब उच्च न्या0 अनु0 134 –क के अधीन इस बात के प्रमाण पत्र दे दे कि –

01. उस मामले में कोई विधि का सार्वजनिक महत्व का कोई प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, और
02. उच्च न्या0 की राय मे उस प्रश्न का उच्चतम न्या0 विनिश्चय आवश्यक है।

खण्ड 3 यह उपबंधित करता है कि सिविल मामलों मे किसी उच्च न्या0 के एक न्यायाधीश के निर्णय, डिक्री या आदेश की अपील उच्चतम न्या0 में नही होगी। किन्तु संसद विधि द्वारा ऐसे मामलों मे अपील का उपबन्ध कर सकती है।

03. दाण्डिक विषयों में अपील फौजदारी मामलो में अपील (अनु0–134)

भारतीय संविधान के अनु0 134 के अनुसार किसी उच्च न्या0 को किसी दाण्डिक कार्यवाही में दिये गये निर्णय, अन्तिम आदेश या दण्डादेश के विरूद्ध उच्चतम न्या0 में अपील दो प्रकार से की जा सकती है–

अ). उच्च न्या0 के प्रमाण पत्र के बिना –

01. उच्च न्या0 ने अपील मे अधीनस्थ न्या0 द्वारा किसी अभियुक्त व्यक्ति की दोषमुक्ति के आदेश को उलट दिया है तथा उसको मृत्युदण्ड दिया है;
02. उच्च न्या0 ने अपील अधीनस्थ न्या0 के किसी मामले का विचारण के लिए अपने पास मांगा लिया है और अभियुक्त को स्वयं मृत्युदण्ड दिया है।

ब) उच्च न्या0 के प्रमाण पत्र के साथ – अनु0 134 (ग) के अनुसार यदि उच्च न्या0 अनु0 134 क के अधीन यह प्रमाणित करता है मामला उच्चतम न्या0 मे अपील के लायक है तो उसमे अपील की जायेगी। फौजदारी /दण्डिक मामलों में अपील का प्रमाण पत्र देने का अधिकार उच्च न्या0 का एक विवेकाधिकार है। यह विवेकाधिकार एक न्यायिक विवेकाधिकार है और इसका प्रयोग

सुनिश्चित एंव मान्य सिद्धान्तों के आधार पर जो इन मामलो को विनियमित है, न्यायिक ढ़ग से किया जाना चाहिए।

04. – **विशेष अनुमति से अपील (अनु0 136)**

अनु0 136 के अन्तर्गत उच्चतम न्या0 अपने विवके से भारत के किसी न्या0 या न्यायधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये गये निर्णय, डिक्री ,निर्धारण, दण्डादेश या आदेश के विरूद्ध अपील के लिए अनुमति दे सकता है। इसका केवल एक ही अपवाद (अनु0 136 का खण्ड (2) है, वह यह है कि इसे सशस्त्र बलों से सम्बंद्ध किसी विधि के अधीन गठित किसी न्या0 के निर्णय आदि से अपील की विशेष अनुमति नही दी जा सकती है।

05. **परामर्शदात्री / सलाहकारी अधिकारिता (अनु0 143)**

भारतीय संविधान का अनु0 143 यह उपबंधित करता है कि जब राष्ट्रपति को यह प्रतीत हो कि –

क. विधि या तथ्य का कोई प्रश्न उत्पन्न हुआ है या उसके उत्पन्न होने की सम्भावना है,

ख. जो सार्वजनिक महत्व का, उस पर उच्चतम न्या0 की सलाह लेना उचित है तो वह उस प्रश्न को उसके विचारार्थ भेज सकता है, तब न्या0 ऐसी सुनवाई के पश्चात् जैसा कि वह उचित समझे राष्ट्रपति को अपनी सलाह भेजेगा।

अनु 143 (2) के अन्तर्गत यदि राष्ट्रपति किसी ऐसे मामले को उच्चतम न्या0 की राय के लिए सौपता है, जो अनु0 131 के परन्तु क में वर्णित है तो न्या0 उस पर राय देने के लिए बाध्य होगा।

इन री0 एजूकेशनल बिल, A.I.R. 1958 SC 956 के बाद में सर्वप्रथम राष्ट्रपति ने उच्चतम न्या0 से राय मॉगी। न्या0 ने इस मामले मे अनु0 143 लागू होने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्त विहित किये थे–

01. अनु 143 (1) में प्रयुक्त कर सकेगा (May) शब्दावली यह दर्शाती है कि उच्चतम न्या0 सलाह देने के लिए बाध्य नही है। यह उसकी इच्छा पर निर्भर करता है।
02. उच्चतम न्या0 को कौन से प्रश्न सौपे जाये इनका निर्धारण राष्ट्रपति करता है। राष्ट्रपति के इन निर्णय पर आपत्ति नही की जा सकती है। अनु0 143 के अन्तर्गत उच्चतम न्या0 द्वारा दी गई राय, यद्यपि आदर के योग्य है, परन्तु वह न्या0 के ऊपर बाध्यकारी नही है। किन्तु व्यवहारतः इसका प्रभाव बाध्यकारी ही है।

इन री स्पेशल कोर्ट बिल, 1978, A.I.R. SC 478 के मामले में उपर्युक्त निर्णय को उलटते हुये यह अभिनिर्धारित किया कि उच्चतम न्या0 राष्ट्रपति को सलाह देने के लिए बाध्य है और उच्चतम न्या0 की राय सभी न्यायालयों पर बाध्यकारी है। किन्तु न्या0 ने यह भी स्पष्ट किया कि राय के लिए निर्दिष्ट विशेष प्रश्नों को ही सौपा जाना चाहिए, यदि प्रश्न अस्पष्ट तथा सामान्य प्रकृति का है तो न्या0 उस पर राय देने के लिए बाध्य नही है।

इस्माइल फारूखी बनाम भारत संघ (अयोध्या केस) A.I.R. 1994 SC 605 में उच्चतम न्या0 की पॉच सदस्यीय संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से राष्ट्रपति को अपनी सलाह देने से इन्कार कर दिया। न्या0 ने कहा कि अनु0 143 के अधीन राष्ट्रपति को ऐसे विषयों पर , जिससे संविधान का प्रयोजन पूरा न होता हो अथवा धर्मनिरपेक्षता के प्रतिकूल है सलाह देने के लिए बाध्य नही है।

स्पेशल रिफरेन्स, A.I.R. 2003 S.C. 87 – गुजरात विधान सभा के समय से पूर्व भंग हो जाने के कारण चुनाव कराने का मामला –

इस मामले में उच्चतम न्या0 के पॉच न्यायाधीशों की पीठ ने यह निर्णय दिया कि ऐसे मामले पर जब कोई ऐसा प्रश्न उत्पन्न हुआ या होने की सम्भावना है, जो सार्वजनिक महत्व का है और उस पर उच्चतम न्या0 का कोई निर्णय नही है तो उच्चतम न्या0 राष्ट्रपति की शंका के निवारण हेतु परामर्श देने के लिए कर्तव्यबद्ध है।

स्वतंत्र न्यायपालिका –

संघीय प्रणाली में जहॉ एक ओर संविधान को सर्वोच्च विधि माना जाता है, वही दूसरी ओर वह सरकार के तीन विभिन्न अंग (कार्यपालिका, विधायिका, न्यायपालिका) के बीच शक्तियों के विभाजन की स्पष्ट व्याख्या भी करता है। अतः संघात्मक संविधान की यह भी अनिवार्य आवश्यकता है कि वह एक स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना भी करे, क्योंकि एक स्वतंत्र न्यायपालिका ही –

01. संविधान की व्याख्या कर सकती है।
02. सरकार के तीन अंगो के क्षेत्राधिकार व शक्तियों की व्याख्या करती है,
03. केन्द्र और राज्यों के बीच उत्पन्न संवैधानिक विवादों को सुलझा सकती है, और
04. संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किये गये मूल अधिकारों को राज्यों के विरूद्ध लागू करवा सकती है और राज्यो की ऐसी विधियों की वैधता की जॉच कर सकती है जो मूल अधिकारों का उल्लंघन करती हो।

सरकार के एक अंग के रूप में विधायिका का कार्य केवल विधि (कानून) बनाना है उन विधियों का पालन करना कार्यपालिका का काम होता है और न्यायपालिका का कार्य यह देखना होता है कि विधायिका ने संविधान के अनुसार कार्य किया है या नही और कार्यपालिका ने विधायिका द्वारा बनाये गये विधान के अनुसार कार्य किया है या नही।

भारतीय संविधान द्वारा स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना –

एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायपालिका ही नागरिकों के अधिकारों की संरक्षिका हो सकती है तथा बिना भय तथा पक्षपात के सबको समान न्याय प्रदान कर सकती है। इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उच्चतम न्या0 अपने कर्तव्यों के पालन के पूर्ण रूप से स्वतंत्र और सभी प्रकार के राजनीतिक दबावों से मुक्त हो।

एस0 पी0 गुप्त बनाम भारत संघ, 1982 के मामले में उच्चतम न्या0 ने कहा है कि ''न्यायपालिका की स्वतंत्रता संविधान का आधार भूत ढॉचा है।''

भारतीय संविधान में न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कायम रखने के लिए निम्नलिखित उपबन्धों का समावेश किया गया है–

01. कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण , अनु0 50
02. न्यायाधीशों के पद की अवधि की सुरक्षा,
03. न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते आदि विधायिका के अधिकार से परे।
04. संसद उच्चतम न्यायालय की शक्ति और अधिकारिता को बढ़ा सकती है, किन्तु कम नही कर सकती है,
05. न्यायाधीशों के अपने कर्तव्य पालन में किये गये आचरण पर संसद में चर्चा पर रोक, तथा
06. न्यायालय के अवमान के लिए दण्ड देने की शक्ति।

कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण–

अनु0 50 राज्य को निर्देश देता है कि राज्य लोक सेवाओं में न्यायपलिका को कार्यपालिका से पृथक करने का प्रयास करेगा। न्यायपालिका का कार्य पालिका के नियंत्रण से मुक्त रहना उसकी स्वतंत्रता और निष्पक्षता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

पदावधि की संरक्षा–

एक बार नियुक्त किये जाने पर न्यायाधीशो को आसानी से पदच्युत नही किया जा सकता है। उसे पदच्युत करने के लिए संविधान में एक विशेष प्रक्रिया का प्रावधान है। प्रथम तो उसको केवल संविधान में दिये गये आधारों पर ही पदच्यूत किया जा सकता है, दूसरे इस प्रयोजन हेतु राष्ट्रपति द्वारा पेश किये गये आवेदन संसद के प्रत्येक सदन के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित किया जाना चाहिए। यह आवेदन एक ही संसद के एक ही सत्र में प्रस्तावित और पारित किया जाना चाहिए। उक्त प्रक्रिया से यह स्पष्ट है कि न्यायाधीशों को उनके पद से पदमुक्त करना आसान नही है।

न्यायाधीश के वेतन , भत्ते आदि विधायिका के अधिकार से परे है–

अनु0 125 के अनुसार उच्चतम न्या0 के न्यायाधीशों के वेतन संविधान के अनुसार नियत किया जाता है और वह भारत की संचित, निधि पर भारित होता है। न्यायाधीशों के कार्यकाल एंव उनके वेतन और भत्तों मे कोई परिवर्तन नही किया जा सकता है, किन्तु देश में वित्तीय संकट के समय उनके वेतन एंव भत्तों मे आवश्यक कटौती की जा सकती है।

संसद उच्चतम न्या0 की शक्ति एंव क्षेत्राधिकार को बढ़ा सकती है किन्तु घटा नही सकती है–

सिविल – मामलों मे संसद उच्चतम न्या0 में की जाने वाली अपीलो की आर्थिक सीमा को बदल सकती है, इस प्रकार उसकी अधिकारिता को बढ़ा सकती है। संसद उच्चतम न्या0 के दण्डिक आपराधिक क्षेत्राधिकार को भी बढ़ा सकती है।

अनु0 32 मे वर्णित प्रयोजनो से भिन्न किन्ही अन्य प्रयोजनो के लिए निर्देश, आदेश या लेख निकालने की शक्ति प्रदान कर सकती है, संसद उच्चतम न्या0 की शक्ति एंव क्षेत्राधिकार को घटा नही सकती है।

5. न्यायाधीशो के अपने कर्तव्य–पालन में किये गये आचरण पर संसद में चर्चा पर रोक –

संसद के किसी भी सदन या राज्य विधान के किसी सदन में किसी न्यायाधीश के अपने कर्तव्यों के पालन में किये गये आचरण पर कोई चर्चा नही की जा सकती है। यह उनकी स्वतंत्रता हेतु आवश्यक है।

6. न्यायालय के अवमान के लिए दण्ड देने की शक्ति –

भारतीय संविधान के अनु0 129 उच्चतम न्या0 और 215 उच्च न्या0 को अपने अवमान के लिए किसी भी व्यक्ति को दण्ड देने की शक्ति प्रदान करता है। यह शक्ति न्या0 की स्वतंत्रता एंव निष्पक्षता को सुरक्षति रखने हेतु आवश्यक है।

संविधान में उच्चतम तथा उच्च न्या0 की स्वतंत्रता बनाये रखने के लिए हर संभव प्रयास किया जा रहा है । परन्तु फिर भी सरकार की ओर से इस सम्बंध में अलोचनात्मक कार्य किया गया है क्योंकि न्यायपालिका अप्रत्यक्ष रूप से कही न कही कार्यपालिका के कथनानुसार ही कार्य संचालित करती है।

राज्य न्यायपालिका
उच्च न्यायालय
अनु0 214–237

राज्य – न्यायपालिका राज्यों के उच्च न्या0 और उसके अधीनस्थ न्या0 से मिलकर गठित होती है । अनु0 214 के अनुसार प्रत्येक राज्य में एक उच्च न्या0 होगा। अनु0 231 (1) के अन्तर्गत संसद दो या अधिक राज्यों और एक संघ राज्यक्षेत्र के लिए एक ही उच्च न्या0 की स्थापना कर सकती है।

उच्च न्यायालयों का गठन (अनु0 216)

प्रत्येक उच्च न्यायालयों में एक मुख्य न्यायाधीश होता है तथा ऐस अन्य न्यायाधीश होते है जिन्हे समय–समस पर राष्ट्रपति नियुक्त करना आवश्यक समझे।

संविधान में उच्च न्या0 में न्यायाधीशो की अधिकतम संख्या का कोई उपबन्ध नही है। इसका निर्धारण आवश्यकयातानुसार किया जाता है।

न्यायाधीशों की नियुक्ति–

उच्च न्यायालयों में मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा सम्बंधित राज्य के राज्यपाल के परामर्श से की जायेगी। मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त अन्य न्यायाधीश की नियुक्ति के बारे में राष्ट्रपति सम्बंधित उच्च न्या0 के मुख्य न्यायाधीश से भी परामर्श कर सकता है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की अर्हताएँ /योग्यताएँ –

अनु0 217 के अनुसार किसी उच्च न्यायालय में न्यायाधीश नियुक्ति होने के लिए एक व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए।–

01. वह भारत का नागरिक हो।
02. भारत राज्य क्षेत्र में कम से कम 10 वर्ष तक कोई न्यायिक पद धारण कर चुका हो,
03. उच्च न्या0 में कम से कम 10 वर्ष तक अधिवक्ता रह चुका हो।

अनु0 219 के अनुसार अपना पद ग्रहण करने के पूर्व न्यायाधीशों को संविधान की तीसरी अनुसूची में उल्लेखित शपथ पत्र की अनुसार, राज्यपाल या उसके द्वारा नियुक्त किसी व्क्ति के समक्ष शपथ लेनी पडेंगी।

श्री कुमार पद्रम प्रसाद बनाम भारत संघ 1992 के मामले मे उच्चतम न्यायालय ने पहली बार आसम उच्च न्या0 में नियुक्ति के लिए अनुमोदित श्री श्रीवास्तवा की नियुक्ति को इस आधार पर अवैध द्योषित कर दिया कि वे संविधान के अनु0 217 (2) के अधीन न्यूनतम अर्हता नही

रखते थे। अनु0 2 (क) के अधीन 'न्यायिक पढ़' धारण करने वाले व्यक्ति से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो न्यायिक कार्य करता है, पक्षकारों के बीच मामला को निश्चय करता है और न्यायिक क्षमता मे निश्चय करता है । उसे कार्यपालिका से पृथक होना चाहिए।

उच्च न्या0 के न्यायाधीश 62 वर्ष की आयु तक अपना पद धारण करेगे (अनु0 217(1)। उच्च न्या0 के न्यायाधीश को उसके पद से उच्चतम न्या0 के न्यायाधीशों के हटाये जाने के आधारों पर ही उसके पद से हटाया जा सकता है।

उच्च न्या0 के न्यायाधीशों का स्थानन्तण –

अनु0 222 (1) अधीन राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायमूर्ति के परामर्श से उच्च न्या0 के किसी न्यायाधीश को एक उच्च न्या0 से दूसरे उच्च न्या0 मे स्थानान्तरण कर सकता है। अनु0 222 (2) के अधीन इस स्थानान्तरण किये गये न्यायाधीश को वेतन के अतिरिक्त ऐसे प्रतीकात्मक भत्ते भी दिये जायेगें जैसा कि संसद विधि द्वारा निर्धारित करे।

भारत संघ बनाम सांकलचन्द्र 1977 के मामले में राष्ट्रपति की उस अधिसूचना को, जिसके द्वारा गुजरात उच्च न्या0 के एक न्यायाधीश को आन्ध्र प्रदेश उच्च न्या0 हस्थानान्तरित कर दिया था, इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि स्थानान्तरण आदेश सम्बंधित न्यायाधीश की सहमति के बिना और भारत के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श के बिना किया गया था। उच्चतम न्या0 ने 3–2 के बहुमत से सरकार के तर्क को स्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्या0 के किसी न्यायाधीश को बिना उसकी सहमति के स्थानान्तरित किया जा सकता है। यदि न्यायाधीश की सहमति को अनु0 222 में निहित जाता है तो वह अपनी सहमति न देकर स्थानान्तरण की शक्ति को विफल कर देगा। भारत के मुख्य न्यायाधीश के मामले में न्या0 ने यह निर्णय दिया कि 'परामर्श' सहमति नही है। परामर्श मानने के लिए राष्ट्रपति बाध्य नही है। किन्तु न्या0 ने यह निर्णय दिया कि स्थानान्तरण की शक्ति जनहित में प्रयोग करने के लिए प्रदान की गई है न कि किसी न्यायाधीश को, जो कार्यपालिका की इच्छानुसार निर्णय नही देता है, उसे दण्डित करने के लिए प्रदान की गई है। अनु0 222 के अधीन राष्ट्रपति अपनी शक्ति का प्रयोग भारत के मुख्य न्यायाधिपति के परामर्श से करने के लिए बाध्य है। यही नही, परामर्श को 'प्रभावी' होना आवश्यक है। इसका तात्पर्य यह है कि न्यायाधीशों से परामर्श करते समय राष्ट्रपति को सभी आवश्यक तथ्यों को, जो उसे उपलब्ध हो उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए। मुख्य न्यायाधीश सभी तथ्यों पर विचार करके राष्ट्रपति को अपना परामर्श देगा।

न्यायाधिपति श्री भगवती और श्री उन्ताबालिया ने अपना विसम्मत असहमति व्यक्त किया और यह निर्णय दिया कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों का स्थानान्तरण बिना उनकी सहमति के नही किया जा सकता है। यदि स्थानान्तरण के लिए न्यायाधीश की सहमति आवश्यक नही होगी

तो कार्यपालिका इस शक्ति का दुरूप्रयोग कर सकती है और किसी भी न्यायाधीश को दण्डस्वरूप एक न्या0 से दूसरे न्या0 को स्थानान्तरित कर सकती है।

वर्तमान स्थिति –

इन री प्रेसीडेन्सियल के वाद में 9 सदस्यीय संविधान पीठ सर्वसम्मति से यह अभिनिर्धारित किया कि परामर्श का पालन किये बिना मुख्य न्यायाधीश द्वारा भेजी गयी सिफारिशो को मानने के लिए कार्यपालिका बाध्य नही है।

उच्च न्या0 की नियुक्ति के मामले में उच्चतम न्या0 के केवल दो वरिष्ठम न्यायाधीशों की सलाह लेना अनिवार्य है किन्तु स्थानान्तरण के मामले मे उच्चतम न्या0 के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशो से परामर्श करना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त सम्बंधित उच्च न्यायालयों जिससे स्थानान्तरण किया गया है और जिसको स्थानान्तरण किया गया है के मुख्य न्यायाधीशो से परामर्श करना भी अनिवार्य है।

परामर्श आम राय से होना चाहिए, लिखित होना चाहिए तथा मुख्य न्यायाधीश की सिफारिश के साथ अन्य न्यायाधीशो का भी सिफारिश भेजी जानी चाहिए।

उच्च न्यायालय की अधिकारिता

उच्च न्यायालय को निम्नलिखित अधिकारिता प्राप्त है–

01.अभिलेख – न्या0 की अधिकारिता।
02.वर्तमान उच्च न्या0 की अधिकारिता।
03.अधीनस्थ न्यायालयों पर निरीक्षण की अधिकारिता।
04.लेख सम्बन्धी अधिकारिता।

01.अभिलेख – न्या0 की अधिकारिता।

उच्चतम न्यायालय की ही तरह प्रत्येक उच्च न्या0 भी एक अभिलेख न्या0 है। अर्थात् यहॉ कार्यवहियॉ लिखित होती है तथा उन्हे सर्वदा संजोये रखा जाता है तथा अपने अवमान के लिए दण्ड देने की भी शक्ति प्राप्त है।

02. वर्तमान उच्च न्या0 की अधिकारिता –

अनु0 225 यह कहता है कि संविधान के उपबन्धो के अधीन तथा समुचित विधानमण्डल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन रहते हुए किसी वर्तमान उच्च न्या0 का 01 क्षेत्राधिकार, 02 उसमे प्रशासित विधि, तथा 03 उच्च न्या0 मे न्याय प्रशासन से सम्बंधित उसके न्यायाधीशो की शक्तियॉ, जिसके अन्तर्गत न्या0 के नियम बुनाने तथा बैठको के नियमन की शक्ति भी शामिल है, वैसे ही रहेगी जैसे इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले थी।

इस अनु0 के परन्तुक द्वारा उच्च न्या0 के क्षेत्राधिकार को और भी बढ़ा दिया गया है। अब उच्च न्या0 राजस्व सम्बंधी मामलों में भी क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया था जो कि संविधान के पूर्व उच्च न्या0 को नही प्राप्त थी।

03. अधीनस्थ न्यायालयों पर निरीक्षण की अधिकारिता– (अनु0 227)

अनु0 227 के अन्तर्गत प्रत्येक उच्च न्यायालय को अपने अधीनस्थ न्या0 तथा न्यायाधिकरणों की देखभाल करने की शक्ति प्राप्त है। इसके प्रयोजनों के लिए उच्च न्या0 को अधीनस्थ न्यायालयों से विवरणी मागनें, उनकी कार्य– प्रणाली और कार्यवाहियों के विनियमन हेतु नियम बनाने तथा उनके पदाधिकारियों द्वारा रखी जाने वाली पुस्तकों, प्रविष्टियों और लेखाओं के प्रपत्रों को विहित करने की शक्ति प्राप्त है, (खण्ड–2)

अनु0 227 के खण्ड 3 के अनुसार उच्च न्या0 अधीनस्थ न्या के शेरीफ, तथा लिपिको, पदाधिकारियो तथा न्यायवादियों, अधिवक्ता और वकीलो को मिलने वाली फीसों की सारिणी भी निश्चित कर सकता है। खण्ड 2 तथा (3) के अधीन निर्मित नियमों के लिए राज्यपाल का पूर्व अनुमोदन आवश्यक है।

किन्तु अनु0 227 के खण्ड (4) के अधीन उच्च न्यायालयों की यह शक्ति सशस्त्र बलो सम्बन्धी किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्या0 या न्या0 अधिकरण पर लागू न होगी।

अनु0 227 के अधीन प्रदत्त शक्ति अनु0 226 के माध्यम से अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण की शक्ति की अपेक्षा अधिक विस्तृत है। यह केवल प्रशासनिक निरीक्षण तक ही सीमित नही है वरन् इसके अन्तर्गत सभी अधीनस्थ न्यायालयों पर न्यायिक निरीक्षण रखने की शक्ति एक असाधारण शक्ति है अतः इसका प्रयोग अधीनस्थ न्या0 को उनके क्षेत्र में कार्य करने के लिए नियंत्रित करने के लिए किया जाना चाहिए।

बभूतमल बनाम लक्ष्मीबाई (1975) के मामले में बम्बई रेन्ट कन्ट्रोल अधि0 1947 के अधीन जिला न्या0 का निर्णय तथ्य विषयक मामले में अन्तिम था। उच्च न्या0 ने जिला न्या0 के तथ्य विषयक निष्कर्षो मे हस्तक्षेप करके अनु0 227 में प्रदत्त शक्ति की परिधि का उल्लद्यन किया है। उच्च न्या0 जिला न्या0 के निर्णय के आधार पर भी हस्तक्षेप नही कर सकता है कि जिला न्या0 ने साक्ष्य के कुछ को गलत समझा है या कुछ अंश की उपेक्षा की है।

डी0 एन0 बनर्जी बनाम पी0 आर0 मुखर्जी 1953 के मामले मे उच्चतम न्या0 ने यह अभिनिर्धारित किया है कि शक्ति का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए जब द्योर अन्याय हुआ हो या जब विधि के नियमों का खुलेआम उल्लंद्यन किया गया हो।

04. उच्च न्यायालय की रिट/लेखा अधिकारिता (अनु0 226)

अनु0 226 यह उपबंधित करता है कि अनु0 32 में किसी बात के होते हुए भी प्रत्येक उच्च न्या0 को उन समस्त क्षेत्रों में, जिनके सम्बन्ध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, संविधान के भाग 3 में प्रदत्त मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए और किसी अन्य प्रयोजन के लिए, सम्बंधित राज्यों में किसी व्यक्ति या प्रधिकारी को समुचित मामलों में किसी सरकार को ऐसे निदेश या रिट, जिसके अन्तर्गत बन्दी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, उत्प्रेषण और अधिकार –इच्छा है, जारी करने की शक्ति होगी। इस प्रकार उच्च न्या0 की रिट अधिकारिता केवल मूल अधिकारों की संरक्षा के लिए ही नही सीमित है बल्कि किसी अन्य विधिक अधिकारों की संरक्षा के लिये भी उपलब्ध है। इस मामले में उच्च न्या0 की शक्ति उच्चतम न्या0 की अपेक्षा अधिक विस्तृत है '' किसी अन्य प्रयोजन के लिए'' पदावली से तात्पर्य किसी विधिक अधिकार या विधिक कर्तव्य से है। इस पदावली का अर्थ यह नही है कि उच्च न्या0 अपनी इच्छानुसार किसी भी प्रयोजन के लिए इसका प्रयोग कर सकते है। उच्च न्यायालयों को इसका प्रयोग संविधान के अतिरिक्त अन्य विधियों के अधीन प्राप्त विधिक अधिकारों के प्रर्वतन कराने के लिए भी किया जा सकता है।

न्यायिक पुनर्विलोकन संविधान का ''आधार भूत ढॉचा ''है : अपने ऐतिहासिक महत्व के निर्णय एल0 चन्द्र कुमार बनाम भारत संद्य 1997 में यह अभिनिर्धारित किया कि विधान मण्डल द्वारा पारित विधानों पर अनु0 226 में निहित उच्च न्यायालयों की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति संविधान का आधारभूत ढॉचा है अतः इसे संविधान संशोधन करके भी समाप्त नही किया जा सकता है।

अधीनस्थ न्यायालय –

प्रत्येक राज्य में उच्च न्या0 के नीचे अनेक अधीनस्थ न्या0 कार्य करते है। संविधान मे इन न्यायालयों को कार्यपालिका के हस्ताक्षेप से मुक्त रखने का प्रर्याप्त उपबन्ध है। इस प्रयोजन के लिए अनु0 235 में इन न्यायालयों के निरीक्षण एंव नियंत्रण का पूर्ण अधिकार उच्च न्यायालयों को प्रदान किया गया है। अधीनस्थ न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति , छुट्टियों आदि के बारे मे राज्यपाल को उच्च न्या0 के परामर्श से कार्य करना होता है।

अनु0 233 के अनुसार किसी राज्य मे जिला न्यायाधीश की नियुक्ति, पद–स्थापना और पदोन्नति उस राज्य के उच्च न्या0 के परामर्श से राज्य का राज्यपाल करता है। इसका अर्थ यह है कि राज्य में जिला न्यायाधीश की नियुक्ति उच्च न्या0 के परामर्श से ही की जा सकती है। जिला न्यायाधीशो के अतिरिक्त राज्य की न्यायिक सेवा मे अन्य व्यक्तियों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग तथा राज्य के उच्च न्या0 के परामर्श के पश्चात् उसके द्वारा इस विषय को शासित करने वाले नियमों के अनुसार ही की जायेगी।

कोइ भी व्यक्ति, जो संघ –राज्य की सेवा में पहले से ही नही लगा हुआ है, जिला न्यायाधीश नियुक्ति होने के लिए पात्र होगा जब–

1. वह कम से कम 07 वर्ष तक अधिवक्ता या वकील रह चुका हो तथा
2. उच्च न्या0 ने उसकी नियुक्ति की सिफारिश की है।

मणिसुव्रत जैन बनाम हरियाणा राज्य 1978 के मामले मे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि राज्यपाल अनु0 233 के अधीन जिला न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए उच्च न्या0 द्वारा दिये गये परामर्श के अनुसार कार्य करने के लिए आबद्ध नही है। जिला न्यायाधीशों की प्रारम्भिक नियुक्ति, सरकार की, उच्च न्यायालय ने परामर्श के पश्चात् अन्य अधिकारिता में है। राज्यपाल उच्च न्या0 की सलाह मानने के लिए आबद्ध नही है। उच्च न्या0 नियुक्ति के लिए व्यक्तियों के नामों की सिफारिश करता है। राज्यपाल इससे आबद्ध नही है। अनु0 233 में यह आपेक्षित है कि राज्यपाल उच्च न्या0 के उन व्यक्यिों के गुणों और अवगुणों पर उसका मत अभिप्राप्त करे जिनका प्रोनन्ति और भर्ती के लिए चयन किया गया है।

अनु0 235 उच्च न्या0 को जिला न्या0 तथा उनके अधीन न्या0 पर नियंत्रण की शक्ति प्रदान करता है।